सत्यमेव जयते

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, रत्नागिरी.

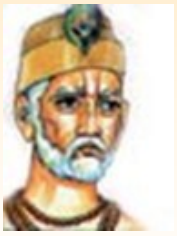

राजभाषा

प्रेरणा

संयोजक

बैंक ऑफ़ इंडिया

रिश्तों की जमापूँजी

रत्नागिरी अंचल

हिंदी तिमाही ई पत्रिका

सितंबर - दिसंबर 2018

अंक 3

अध्यक्ष की कलम

साथियो,

प्रथम आप सबको मेरा सस्नेह नमस्कार,

हमारी समिति ई पत्रिका प्रेरणा का प्रकाशन प्रत्येक तिमाही में करती है। ई पत्रिका प्रकाशन का मुख्य उद्येश्य आप जानते ही है कि, राजभाषा का प्रचार—प्रसार जिससे हमारे सदस्य एक अलग विषय से रूबरू हो जाये और वैसाहि विषय आपके सामने इस बार प्रेरणा के माध्यम से रखने का प्रयास किया जा रहा है, आप जिनके दोहे दिल से सुनते है, जिनकी रचनाएं सुनकर आपका कार्य भी रूक जाता है और जीवन का सत्य सामने उभर आ जाता है, ऐसे रचनाकारों का परिचय उनके रचना के साथ कराना चाहते है।

मैं अधिक जादा न लिखकर एक महान संत कबीर जी के दोहे के साथ मैं आप से अनुरोध करूंगा कि, आपके सहयोग बिना समिति का कार्य अधूरा है।

हिंदू कहें मोहि राम पियारा,
तुर्क कहे रहमाना,
आपस में दोड लड़ी-लड़ी मुए,
मरम न कोउ जाना।

सभी को पुन: मंगल कामनाएं।

धन्यवाद।

हस्ता/-

28 नवंबर 2018

(बी वी एस अच्युतराव)
अध्यक्ष एवं उप महाप्रबंधक

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, रत्नागिरी.

अंतरंग...

'प्रेरणा'
ई पत्रिका
संपादन
एवं आर्ट
श्री रमेश
गायकवाड
संपादक
राजभाषा
'रत्नसिंधु'
सदस्य
सचिव
नराकास

रसखान

सुभद्रा कुमारी

मीराबाई

तुलसीदास

सूरदास

रैदास

कबीरदास

रसखान

रसखान का जन्म सन् 1548 में हुआ माना जाता है। उनका मूल नाम सैयद इब्राहिम था और वे दिल्ली के आस-पास के रहने वाले थे। कृष्ण-भक्ति ने उन्हें ऐसा मुग्ध कर दिया कि गोस्वामी विट्ठलनाथ से दीक्षा ली और ब्रजभूमि में जा बसे। सन् 1628 के लगभग उनकी मृत्यु हुई।

सुजान रसखान और प्रेमवाटिका उनकी उपलब्ध कृतियाँ हैं। रसखान रचनावली के नाम से उनकी रचनाओं का संग्रह मिलता है।

प्रमुख कृष्णभक्त कवि रसखान की अनुरक्ति न केवल कृष्ण के प्रति प्रकट हुई है बल्कि कृष्ण-भूमि के प्रति भी उनका अनन्य अनुराग व्यक्त हुआ है। उनके काव्य में कृष्ण की रूप-माधुरी, ब्रज-महिमा, राधा-कृष्ण की प्रेम-लीलाओं का मनोहर वर्णन मिलता है। वे अपनी प्रेम की तन्मयता, भाव-विह्नलता और आसक्ति के उल्लास के लिए जितने प्रसिद्ध हैं उतने ही अपनी भाषा की मार्मिकता, शब्द-चयन तथा व्यंजक शैली के लिए। उनके यहाँ ब्रजभाषा का अत्यंत सरस और मनोरम प्रयोग मिलता है, जिसमें ज़रा भी शब्दाडंबर नहीं है।

रसखान के दोहे

प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोइ।
जो जन जानै प्रेम तो, मरै जगत क्यों रोइ॥
कमल तंतु सो छीन अरु, कठिन खड़ग की धार।
अति सूधो टढ़ौ बहुरि, प्रेमपंथ अनिवार॥
बिन गुन जोबन रूप धन, बिन स्वारथ हित जानि।
सुद्ध कामना ते रहित, प्रेम सकल रसखानि॥
प्रेम अगम अनुपम अमित, सागर सरिस बखान।
जो आवत एहि ढिग बहुरि, जात नाहिं रसखान॥
अति सूक्ष्म कोमल अतिहि, अति पतरौ अति दूर।
प्रेम कठिन सब ते सदा, नित इकरस भरपूर॥
भले वृथा करि पचि मरौ, ज्ञान गरूर बढ़ाय।
बिना प्रेम फीको सबै, कोटिन कियो उपाय॥
दंपति सुख अरु विषय रस, पूजा निष्ठा ध्यान।
इन हे परे बखानिये, सुद्ध प्रेम रसखान॥
प्रेम रूप दर्पण अहे, रचै अजूबो खेल।
या में अपनो रूप कछु, लखि परिहै अनमेल॥
हरि के सब आधीन पै, हरी प्रेम आधीन।

सुभद्रा कुमारी

सुभद्राकुमारी का जन्म नागपंचमी के दिन 16 अगस्त 1904 को इलाहाबाद (उत्तरप्रदेश) के निकट निहालपुर गाँव में एक सम्पन्न परिवार में हुआ था।

सुभद्राकुमारी को बचपन से ही काव्य-ग्रंथों से विशेष लगाव व रूचि था। आपका विद्यार्थी जीवन प्रयाग में ही बीता। अल्पायु आयु में ही सुभद्रा की पहली कविता प्रकाशित हुई थी। सुभद्रा और महादेवी वर्मा दोनों बचपन की सहेलियाँ थीं। सुभद्राकुमारी का विवाह खंडवा (मद्य प्रदेश) निवासी 'ठाकुर लक्ष्मण सिंह' के साथ हुआ। पति के साथ वे भी महात्मा गांधी के आंदोलन से जुड़ गईं और राष्ट्र-प्रेम पर कविताएं करने लगी। 1948 में एक सड़क दुर्घटना में आपका निधन हो गया।

साहित्य कृतियां

आपका पहला काव्य-संग्रह 'मुकुल' 1930 में प्रकाशित हुआ। इनकी चुनी हुई कविताएँ 'त्रिधारा' में प्रकाशित हुई हैं। 'झाँसी की रानी' इनकी बहुचर्चित रचना है।

कविता : अनोखा दान, आराधना, इसका रोना, उपेक्षा, उल्लास,कलह-कारण, कोयल, खिलौनेवाला, चलते समय, चिंता, जीवन-फूल, झाँसी की रानी की समाधि पर, झांसी की रानी, झिलमिल तारे, ठुकरा दो या प्यार करो, तुम, नीम, परिचय, पानी और धूप, पूछो, प्रतीक्षा, प्रथम दर्शन,प्रभु तुम मेरे मन की जानो, प्रियतम से, फूल के प्रति, बिदाई, भ्रम, मधुमय प्याली, मुरझाया फूल, मेरा गीत, मेरा जीवन, मेरा नया बचपन, मेरी टेक, मेरे पथिक, यह कदम्ब का पेड़-2, यह कदम्ब का पेड़, विजयी मयूर,विदा,वीरों का हो कैसा वसन्त, वेदना, व्याकुल चाह, समर्पण, साध, स्वदेश के प्रति, जलियाँवाला बाग में बसंत

सुभद्राजी को प्राय: उनके काव्य के लिए ही जाना जाता है लेकिन उन्होंने राष्ट्रीय आंदोलन में भी सक्रिय भागीदारी की और जेल यात्रा के पश्चात आपके तीन कहानी संग्रह भी प्रकाशित हुए, जो निम्नलिखित हैं:

बिखरे मोती (1932)

उन्मादिनी (1934)

यहाँ कोकिला नहीं, काग हैं, शोर मचाते,
काले काले कीट, भ्रमर का भ्रम उपजाते।
कलियाँ भी अधखिली, मिली हैं कंटक-कुल से,
वे पौधे, व पुष्प शुष्क हैं अथवा झुलसे।परिमल-हीन पराग दाग़ सा बना पड़ा है,
हा! यह प्यारा बाग़ खून से सना पड़ा है।
ओ, प्रिय ऋतुराज! किन्तु धीरे से आना,
यह है शोक-स्थान यहाँ मत शोर मचाना।
वायु चले, पर मंद चाल से उसे चलाना,
दुःख की आहें संग उड़ा कर मत ले जाना।
कोकिल गावें, किन्तु राग रोने का गावें,
भ्रमर करें गुंजार कष्ट की कथा सुनावें।
लाना संग में पुष्प, न हों वे अधिक सजीले,
तो सुगंध भी मंद, ओस से कुछ कुछ गीले।
किन्तु न तुम उपहार भाव आ कर दिखलाना,
स्मृति में पूजा हेतु यहाँ थोड़े बिखराना।
कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा कर,
कलियाँ उनके लिये गिराना थोड़ी ला कर।
आशाओं से भरे हृदय भी छिन्न हुए हैं,
अपने प्रिय परिवार देश से भिन्न हुए हैं।
कुछ कलियाँ अधखिली यहाँ इसलिए चढ़ाना,
कर के उनकी याद अश्रु के ओस बहाना।
तड़प तड़प कर वृद्ध मरे हैं गोली खा कर,
शुष्क पुष्प कुछ वहाँ गिरा देना तुम जा कर।
यह सब करना, किन्तु यहाँ मत शोर मचाना,
यह है शोक-स्थान बहुत धीरे से आना।

- सुभद्रा कुमारी चौहान

मीराबाई

कृष्णभक्ति शाखा की हिंदी की महान कवयित्री मीराबाई का जन्म संवत् १५७३ में जोधपुर में चोकड़ी नामक गाँव में हुआ था। इनका विवाह उदयपुर के महाराणा कुमार भोजराज जी के साथ हुआ था। ये बचपन से ही कृष्णभक्ति में रुचि लेने लगी थीं।

विवाह के थोड़े ही दिन के बाद आपके पति का स्वर्गवास हो गया था। पति के परलोकवास के बाद इनकी भक्ति दिन- प्रति- दिन बढ़ती गई। ये मंदिरों में जाकर वहाँ मौजूद कृष्णभक्तों के सामने कृष्णजी की मूर्ति के आगे नाचती रहती थीं।

मीराबाई का घर से निकाला जाना

मीराबाई का कृष्णभक्ति में नाचना और गाना राज परिवार को अच्छा नहीं लगा। उन्होंने कई बार मीराबाई को विष देकर मारने की कोशिश की। घर वालों के इस प्रकार के व्यवहार से परेशान होकर वह द्वारका और वृंदावन गईं। वह जहाँ जाती थीं, वहाँ लोगों का सम्मान मिलता था। लोग आपको देवियों के जैसा प्यार और सम्मान देते थे। इसी दौरान उन्होंने तुलसीदास को पत्र लिखा था :-

स्वस्ति श्री तुलसी कुलभूषण दूषन- हरन गोसाई।
बारहिं बार प्रनाम करहूँ अब हरहूँ सोक- समुदाई।।
घर के स्वजन हमारे जेते सबन्ह उपाधि बढ़ाई।
साधु- सग अरु भजन करत माहिं देत कलेस महाई।।
मेरे माता- पिता के समहौ, हरिभक्तन्ह सुखदाई।
हमको कहा उचित करिबो है, सो लिखिए समझाई।।

मीराबाई के पत्र का जबाव तुलसी दास ने इस प्रकार दिया:-

जाके प्रिय न राम बैदेही।
सो नर तजिए कोटि बैरी सम जद्यपि परम सनेहा।।
नाते सबै राम के मनियत सुहृमद सुसंख्य जहाँ लौ।
अंजन कहा आँखि जो फूटे, बहुतक कहो कहां लौ।।

मीराबाई ने चार ग्रंथों की रचना की--

- बरसी का मायरा
- गीत गोविंद टीका
- राग गोविंद
- राग सोरठ के पद

इसके अलावा मीराबाई के गीतों का संकलन "मीराबाई की पदावली' नामक ग्रन्थ में किया गया है।

मीराबाई की भक्ति

मीरा की भक्ति में माधुर्य- भाव काफी हद तक पाया जाता था। वह अपने इष्टदेव कृष्ण की भावना प्रियतम या पति के रुप में करती थी। उनका मानना था कि इस संसार में कृष्ण के अलावा कोई पुरुष है ही नहीं। कृष्ण के रुप की दीवानी थी--

बसो मेरे नैनन में नंदलाल।
मोहनी मूरति, साँवरि, सुरति नैना बने विसाल।।
अधर सुधारस मुरली बाजति, उर बैजंती माल।
क्षुद्र घंटिका कटि- तट सोभित, नूपुर शब्द रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भक्त बछल गोपाल।।

मीराबाई रैदास को अपना गुरु मानते हुए कहती हैं -

'गुरु मिलिया रैदास दीन्ही ज्ञान की गुटकी।'

इन्होंने अपने बहुत से पदों की रचना राजस्थानी मिश्रित भाषा में ही है। इसके अलावा कुछ विशुद्ध साहित्यिक ब्रजभाषा में भी लिखा है। इन्होंने जन्मजात कवियित्री न होने के बावजूद भक्ति की भावना में कवियित्री के रुप में प्रसिद्धि प्रदान की। मीरा के विरह गीतों में समकालीन कवियों की अपेक्षा अधिक स्वाभाविकता पाई जाती है। इन्होंने अपने पदों में श्रृंगार और शांत रस का प्रयोग विशेष रुप से किया है।

मन रे पासि हरि के चरन।
सुभग सीतल कमल- कोमल त्रिविध - ज्वाला- हरन।
जो चरन प्रहमलाद परसे इंद्र- पद्वी- हान।।
जिन चरन ध्रुव अटल कींन्हों राखि अपनी सरन।
जिन चरन ब्राहमांड मेंथ्यों नखसिखौ श्री भरन।।
जिन चरन प्रभु परस लनिहों तरी गौतम धरनि।
जिन चरन धरथो गोबरधन गरब- मधवा- हरन।।
दास मीरा लाल गिरधर आजम तारन तरन।।

तुलसीदास

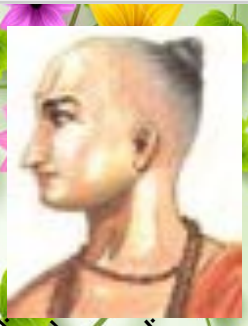

महान कवि तुलसीदास की प्रतिभा-किरणों से न केवल हिन्दू समाज और भारत, बल्कि समस्त संसार आलोकित हो रहा है । बड़ा अफसोस है कि उसी कवि का जन्म-काल विवादों के अंधकार में पड़ा हुआ है। अब तक प्राप्त शोध-निष्कर्ष भी हमें निश्चितता प्रदान करने में असमर्थ दिखाई देते हैं। मूलगोसाईं-चरित के तथ्यों के आधार पर डा० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल और श्यामसुंदर दास तथा किसी जनश्रुति के आधार पर "मानसमयंक' - कार भी १५५४ का ही समर्थन करते हैं। इसके पक्ष में मूल गोसाईं-चरित की निम्नांकित पंक्तियों का विशेष उल्लेख किया जाता है।

पंद्रह सै चौवन विषै, कालिंदी के तीर,
सावन सुक्ला सत्तमी, तुलसी धरेउ शरीर ।

तुलसीदास की जन्मभूमि

तुलसीदास की जन्मभूमि होने का गौरव पाने के लिए अब तक राजापुर (बांदा), सोरों (एटा), हाजीपुर (चित्रकूट के निकट), तथा तारी की ओर से प्रयास किए गए हैं। संत तुलसी साहिब के आत्मोल्लेखों, राजापुर के सरयूपारीण ब्राह्मणों को प्राप्त "मुआफी' आदि बहिर्साक्ष्यों और अयोध्याकांड (मानस) के तायस प्रसंग, भगवान राम के वन गमन के क्रम में यमुना नदी से आगे बढ़ने पर व्यक्त कवि का भावावेश आदि अंतर्साक्ष्यों तथा तुलसी-साहित्य की भाषिक वृत्तियों के आधार पर रामबहोरे शुक्ल राजापुर को तुलसी की जन्मभूमि होना प्रमाणित हुआ है।

रामनरेश त्रिपाठी का निष्कर्ष है कि तुलसीदास का जन्म स्थान सोरों ही है। सोरों में तुलसीदास के स्थान का अवशेष, तुलसीदास के भाई नंददास के उत्तराधिकारी नरसिंह जी का मंदिर और वहां उनके उत्तराधिकारियों की विद्यमानता से त्रिपाठी और गुप्त जी के मत को परिपुष्ट करते हैं।तुलसीदास का बाल्यकाल घोर अर्थ-दारिद्रय में बीता। भिक्षोपजीवी परिवार में उत्पन्न होने के कारण बालक तुलसीदास को भी वही साधन अंगीकृत करना पड़ा। अर्थ-संकट से गुजरते हुए परिवार में नये सदस्यों का आगमन हर्षजनक नहीं माना गया -

जायो कुल मंगन बधावनो बजायो सुनि,
भयो परिताप पाय जननी जनक को ।
बारें ते ललात बिललात द्वार-द्वार दीन,
जानत हौं चारि फल चारि ही चनक को ।
(कवितावली)

मातु पिता जग जाय तज्यो विधि हू न लिखी कछु भाल भलाई
नीच निरादर भाजन कादर कूकर टूकनि लागि ललाई ।
राम सुभाउ सुन्यो तुलसी प्रभु, सो कह्यो बारक पेट खलाई ।
स्वारथ को परमारथ को रघुनाथ सो साहब खोरि न लाई ।।

होश संभालने के पुर्व ही जिसके सर पर से माता - पिता के वात्सल्य और संरक्षण की छाया सदा -सर्वदा के लिए हट गयी, होश संभालते ही जिसे एक मुट्ठी अन्न के लिए द्वार-द्वार विललाने को बाध्य होना पड़ा, संकट-काल उपस्थित देखकर जिसके स्वजन-परिजन दर किनार हो गए, चार मुट्ठी चने भी जिसके लिए जीवन के चरम प्राप्य (अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष) बन गए, वह कैसे समझे कि विधाता ने उसके भाल में भी भलाई के कुछ शब्द लिखे हैं। उक्त पदों में व्यंजित वेदना का सही अनुभव तो उसे ही हो सकता है, जिसे उस दारुण परिस्थिति से गुजरना पड़ा हो। ऐसा ही एक पद विनयपत्रिका में भी मिलता है -

द्वार-द्वार दीनता कही काढि रद परिपा हूं
हे दयालु, दुनी दस दिसा दुख-दोस-दलन-छम कियो संभाषन का हूं।
तनु जन्यो कुटिल कोट ज्यों तज्यो मातु-पिता हूं।
काहे को रोष-दोष काहि धौं मेरे ही अभाग मो सी सकुचत छुइ सब छाहूं

सूरदास

सूरदास जी वात्सल्य रस के सम्राट माने जाते हैं। उन्होंने श्रृंगार और शान्त रसों का भी बड़ा मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

सूरदास की जन्मतिथि एवं जन्मस्थान के विषय में विद्वानों में मतभेद है। "साहित्य लहरी' सूर की लिखी रचना मानी जाती है। इसमें साहित्य लहरी के रचना-काल के सम्बन्ध में

निम्न पद मिलता है -

मुनि पुनि के रस लेख ।

दसन गौरीनन्द को लिखि सुवल संवत् पेख ।।

इसका अर्थ संवत् १६०७ वि० माना जाता है, अतएवं "साहित्य लहरी' का रचना काल संवत् १६०७ वि० है। इस ग्रन्थ से यह भी प्रमाणित होता है कि सूर के गुरु श्री बल्लभाचार्य थे। इस आधार पर सूरदास का जन्म सं० १५३५ वि० के लगभग ठहरता है, क्योंकि बल्लभ सम्प्रदाय की मान्यता है कि बल्लभाचार्य सूरदास से दस दिन बड़े थे और बल्लभाचार्य का जन्म उक्त संवत् की वैशाख् कृष्ण एकादशी को हुआ था। इसलिए सूरदास की जन्म-तिथि वैशाख शुक्ला पंचमी, संवत् १५३५ वि० समीचीन मानी जाती है। उनकी मृत्यु संवत् १६२० से १६४८ वि० के मध्य मान्य है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी के मतानुसार सूरदास का जन्म संवत् १५४० वि० के सन्निकट और मृत्यु संवत् १६२० वि० के आसपास मानी जाती है।

जन्म स्थल

'चौरासी वैष्णव की वार्ता' के आधार पर उनका जन्म रुनकता अथवा रेणु का क्षेत्र (वर्तमान जिला आगरान्तर्गत) में हुआ था। मथुरा और आगरा के बीच गऊघाट पर ये निवास करते थे। बल्लभाचार्य से इनकी भेंट वहीं पर हुई थी। "भावप्रकाश' में सूर का जन्म स्थान सीही नामक ग्राम बताया गया है। वे सारस्वत ब्राह्मण थे और जन्म के अंधे थे।

"आइने अकबरी' में (संवत् १६५३ वि०) तथा "मुतखबुत-तवारीख' के अनुसार सूरदास को अकबर के दरबारी संगीतज्ञों में माना है।

अधिकतर विद्वानों का मत है कि सूर का जन्म सीही नामक ग्राम में एक निर्धन सारस्वत ब्राह्मण परिवार में हुआ था। बाद में ये आगरा और मथुरा के बीच गऊघाट पर आकर रहने लगे थे।

खंजन नैन रुप मदमाते ।
अतिशय चारु चपल अनियारे,
पल पिंजरा न समाते ।।
चलि - चलि जात निकट स्रवनन के,
उलट-पुलट ताटंक फँदाते ।
"सूरदास' अंजन गुन अटके,
नतरु अबहिं उड़ जाते ।।

क्या सूरदास अंधे थे ?

सूरदास श्रीनाथ भ की "संस्कृतवार्ता मणिपाला', श्री हरिराय कृत "भाव-प्रकाश", श्री गोकुलनाथ की "निजवार्ता' आदि ग्रन्थों के आधार पर, जन्म के अन्धे माने गए हैं। लेकिन राधा-कृष्ण के रुप सौन्दर्य का सजीव चित्रण, नाना रंगों का वर्णन, सूक्ष्म पर्यवेक्षणशीलता आदि गुणों के कारण अधिकतर वर्तमान विद्वान सूर को जन्मान्ध स्वीकार नहीं करते।"

श्यामसुन्दरदास ने इस सम्बन्ध में लिखा है - "सूर वास्तव में जन्मान्ध नहीं थे, क्योंकि श्रृंगार तथा रंग-रुपादि का जो वर्णन उन्होंने किया है वैसा कोई जन्मान्ध नहीं कर सकता।" डॉक्टर हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है -

"सूरसागर के कुछ पदों से यह ध्वनि अवश्य निकलती है कि सूरदास अपने को जन्म का अन्धा और कर्म का अभागा कहते हैं, पर सब समय इसके अक्षरार्थ को ही प्रधान नहीं मानना चाहिए।"

रचनाएं

सूरदास की रचनाओं में निम्नलिखित पाँच ग्रन्थ बताए जाते हैं -

१ सूरसागर
२ सूरसारावली
३ साहित्य-लहरी
४ नल-दमयन्ती
५ ब्याहलो

उपरोक्त में अन्तिम दो ग्रंथ अप्राप्य हैं।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित हस्तलिखित पुस्तकों की विवरण तालिका में सूरदास के १६ ग्रन्थों का उल्लेख है। इनमें सूरसागर, सूरसारावली, साहित्य लहरी, नल-दमयन्ती, ब्याहलो के अतिरिक्त दशमस्कंध टीका, नागलीला, भागवत, गोवर्धन लीला, सूरपचीसी, सूरसागर सार, प्राणप्यारी, आदि ग्रन्थ सम्मिलित हैं। इनमें प्रारम्भ के तीन ग्रंथ ही महत्त्वपूर्ण समझे जाते हैं।

रैदास

रैदास नाम से विख्यात संत रविदास का जन्म सन् 1388 (इनका जन्म कुछ विद्वान 1398 में हुआ भी बताते हैं) को बनारस में हुआ था। रैदास कबीर के समकालीन हैं।

रैदास की ख्याति से प्रभावित होकर सिकंदर लोदी ने इन्हें दिल्ली आने का निमंत्रण भेजा था।

मध्ययुगीन साधकों में रैदास का विशिष्ट स्थान है। कबीर की तरह रैदास भी संत कोटि के प्रमुख कवियों में विशिष्ट स्थान रखते हैं। कबीर ने 'संतन में रविदास' कहकर इन्हें मान्यता दी है।

मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा जैसे दिखावों में रैदास का बिल्कुल भी विश्वास न था। वह व्यक्ति की आंतरिक भावनाओं और आपसी भाईचारे को ही सच्चा धर्म मानते थे। रैदास ने अपनी काव्य-रचनाओं में सरल, व्यावहारिक ब्रजभाषा का प्रयोग किया है, जिसमें अवधी, राजस्थानी, खड़ी बोली और उर्दू-फ़ारसी के शब्दों का भी मिश्रण है। रैदास को उपमा और रूपक अलंकार विशेष प्रिय रहे हैं। सीधे-सादे पदों में संत कवि ने हृदय के भाव बड़ी सफ़ाई से प्रकट किए हैं। इनका आत्मनिवेदन, दैन्य भाव और सहज भक्ति पाठक के हृदय को उद्वेलित करते हैं। रैदास के चालीस पद सिखों के पवित्र धर्मग्रंथ 'गुरुग्रंथ साहब' में भी सम्मिलित हैं।

कहते हैं मीरा के गुरु रैदास ही थे।

अब कैसे छूटे राम रट लागी।
प्रभु जी, तुम चंदन हम पानी, जाकी अँग-अँग बास समानी॥
प्रभु जी, तुम घन बन हम मोरा, जैसे चितवत चंद चकोरा॥
प्रभु जी, तुम दीपक हम बाती, जाकी जोति बरै दिन राती॥
प्रभु जी, तुम मोती, हम धागा जैसे सोनहिं मिलत सोहागा॥

रैदास के दोहे

जाति-जाति में जाति हैं, जो केतन के पात।
रैदास मनुष ना जुड़ सके जब तक जाति न जात।।
रैदास कनक और कंगन माहि जिमि अंतर कछु नाहिं।
तैसे ही अंतर नहीं हिन्दुअन तुरकन माहि।।
हिंदू तुरक नहीं कछु भेदा सभी मह एक रक्त और मासा।
दोऊ एकऊ दूजा नाहीं, पेख्यो सोइ रैदासा।।
कह रैदास तेरी भगति दूरि है, भाग बड़े सो पावै।
तजि अभिमान मेटि आपा पर, पिपिलक हवै चुनि खावै।।
कृस्न, करीम, राम, हरि, राघव, जब लग एक न पेखा।
वेद कतेब कुरान, पुरानन, सहज एक नहिं देखा।।

कबीरदास

कबीर हिंदी साहित्य के महिमामण्डित व्यक्तित्व हैं। कबीर के जन्म के संबंध में अनेक किंवदन्तियाँ हैं। कुछ लोगों के अनुसार वे रामानन्द स्वामी के आशीर्वाद से काशी की एक विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से पैदा हुए थे, जिसको भूल से रामानंद जी ने पुत्रवती होने का आशीर्वाद दे दिया था। ब्राह्मणी उस नवजात शिशु को लहरतारा ताल के पास फेंक आयी।

कबीर के माता- पिता के विषय में एक राय निश्चित नहीं है कि कबीर "नीमा' और "नीरु' की वास्तविक संतान थे या नीमा और नीरु ने केवल इनका पालन- पोषण ही किया था। कहा जाता है कि नीरु जुलाहे को यह बच्चा लहरतारा ताल पर पड़ा पाया, जिसे वह अपने घर ले आया और उसका पालन-पोषण किया। बाद में यही बालक कबीर कहलाया।

कबीर ने स्वयं को जुलाहे के रुप में प्रस्तुत किया है -

"जाति जुलाहा नाम कबीरा
बनि बनि फिरो उदासी।'

कबीर पन्थियों की मान्यता है कि कबीर की उत्पत्ति काशी में लहरतारा तालाब में उत्पन्न कमल के मनोहर पुष्प के ऊपर बालक के रूप में हुई। ऐसा भी कहा जाता है कि कबीर जन्म से मुसलमान थे और युवावस्था में स्वामी रामानन्द के प्रभाव से उन्हें हिंदू धर्म का ज्ञान हुआ। एक दिन कबीर पञ्चगंगा घाट की सीढ़ियों पर गिर पड़े थे, रामानन्द ज उसी समय गंगास्नान करने के लिये सीढ़ियाँ उतर रहे थे कि उनका पैर कबीर के शरीर पर पड़ गया।

उनके मुख से तत्काल `राम-राम' शब्द निकल पड़ा। उसी राम को कबीर ने दीक्षा-मन्त्र मान लिया और रामानन्द जी को अपना गुरु स्वीकार कर लिया। कबीर के ही शब्दों में- `हम कासी में प्रकट भये हैं, रामानन्द चेताये'। अन्य जनश्रुतियों से ज्ञात होता है कि कबीर ने हिंदु-मुसलमान का भेद मिटा कर हिंदू-भक्तों तथा मुसलमान फक़ीरों का सत्संग किया और दोनों की अच्छी बातों को आत्मसात कर लिया।

जनश्रुति के अनुसार कबीर के एक पुत्र कमल तथा पुत्री कमाली थी। इतने लोगों की परवरिश करने के लिये उन्हें अपने करघे पर काफी काम करना पड़ता था। साधु संतों का तो घर में जमावड़ा रहता ही था।

कबीर को कबीर पंथ में, बाल- ब्रह्मचारी और विराणी माना जाता है। इस पंथ के अनुसार कामात्य उसका शिष्य था और कमाली तथा लोई उनकी शिष्या। लोई शब्द का प्रयोग कबीर ने एक जगह कंबल के रुप में भी किया है। वस्तुतः कबीर की पत्नी और संतान दोनों थे। एक जगह लोई को पुकार कर कबीर कहते हैं :-

"कहत कबीर सुनहु रे लोई।
हरि बिन राखन हार न कोई।।'

कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे-

`मसि कागद छूवो नहीं, कलम गही नहिं हाथ।'

उन्होंने स्वयं ग्रंथ नहीं लिखे, मुँह से भाखे और उनके शिष्यों ने उसे लिख लिया। आप के समस्त विचारों में रामनाम की महिमा प्रतिध्वनित होती है। वे एक ही ईश्वर को मानते थे और कर्मकाण्ड के घोर विरोधी थे। अवतार, मूर्त्ति, रोज़ा, ईद, मसजिद, मंदिर आदि को वे नहीं मानते थे।

समिति का कार्यालय

समिति का पुस्तकालय